साहित्य सिनेमा सेतु
रील से रियल लाइफ तक
ISSN: 2584-0819

शोध लेख : लोक संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में बुंदेलखण्ड

-साहिबा ख़ातून
पीएच.डी शोधार्थी, मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद
https://sahityacinemasetu.com/bundelkhand-in-the-context-of-folk-culture/

प्रस्तावना- लोक संस्कृति का अर्थ विविध रूपों में ग्रहण किया जा सकता है, लोक संस्कृति किसी भी क्षेत्र विशेष की पहचान होती है। जिसमें उस क्षेत्र का संपूर्ण इतिहास और जन-जीवन विद्यमान रहता है। भारत में लोक संस्कृति का इतिहास अत्यंत प्राचीन है लोक संस्कृति के अंतर्गत हम मानव को प्रकृति से जुड़ा हुआ पाते है। लोक संस्कृति लोक साहित्य का अमर रूप है- लोक संस्कृति को स्पष्ट करते हुए डॉ वासुदेव शरण अग्रवाल कहते हैं कि- "लोक हमारे जीवन का महा समुद्र हैं, उसमें भूत भविष्य वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है।"1 लोक संस्कृति के संबंध में विद्वानों ने उसके महत्व को स्पष्ट रूप से रेखांकित किया हैं। बुंदेलखंड मध्य भारत का प्राचीन क्षेत्र है जो अपनी विविधताओं से संपन्न सामाजिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक विरासत को वर्तमान में भी सहेजे हुए है। "लोक साहित्य की इस धारा में इस हम प्रकृति के अपूर्व सौन्दर्य के भी दर्शन करते हैं। लहलहाते खेत, खलिहान, नदी-नाले, बावड़ी, पोखर आदि की अपनी छटा होती है जो इस लोकसाहित्य के माध्यम से मन को प्रफुल्लता देती है। यही नहीं, हमारे अनेक ऐसे राष्ट्रीय त्यौहार हैं जिनका असली रूप लोकसाहित्य में ही प्रकट होता है। सावन का महीना आते ही ससुराल में गई सौभाग्वातियाँ अपना पीहर याद करने लग जाती हैं। वे सावन के झूले, वर्षा, फुहारों को याद करने लग जाती हैं। इसी प्रकार दीवाली, होली, रक्षाबन्धन, तीज, दशहरा आदि त्यौहारों, ऋतु, पर्वो और प्राकृतिक उपकरणों की उपयोगिता सिद्ध होती है। हमारे राष्ट्रीय-सांस्कृतिक बीजमूलों की परिपुष्ट परम्परा लोकसाहित्य में ही सन्निहित है।"2

इतिहास में बुंदेलखंड की प्रसिद्धि का आधार आल्हा- ऊदल की कथा हैं किंतु लोक संस्कृति के विविध रूपों को भी बुंदेली धरा अपने आंचल में संजोयें हुए है। अयोध्या प्रसाद गुप्त अपनी पुस्तक में कहते हैं कि- "बुन्देलखण्ड भारतवर्ष का ह्रदय स्थल है। उत्तर में यमुना से दक्षिण में नर्मदा के मध्य विस्तृत इस अंचल के नाम प्राचीन काल में पुलिंद देश, दशार्ण, चेदि तथा जैजाक भुक्ति भी रहे हैं। इस अंचल में कला-साहित्य और संस्कृति की त्रिवेणी युगों-युगों से प्रवाहित है।"3

लोकगीत- लोकगीत परम्परा भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर है। लोकगीत अपनी संस्कृति परंपरा को पहचानने का जरिया है। हर प्रांत के लोकगीत अलग-अलग होते है। बुंदेलखंड के लोकगीतों की अपनी विशेषताएँ है। इन लोकगीतों की जड़ें अत्यंत ही गहरी है। वर्षा ऋतु में गाया जाने वाला 'आल्हा' वीर रस से परिपूर्ण लोक गीत है जिसे सुनकर दुर्बल से दुर्बल व्यक्ति में भी जोश आ जाता है।

फाग लोक गीत- बुन्देलखण्ड का यह अत्यंत लोकप्रिय लोक गीत हैं जो वर्षा ऋतु में गाया जाता है। इसके जनक बुन्देलखण्ड के प्रसिद्ध कवि ईसरी है। फाग का छन्द यहाँ द्रष्टव्य हैं-
लाल रंग डारे गुलाबी रंग डारे और रंग डारे केसरिया।
मथुरा नगर की गुजरिया।
कौन नगर के कुंवर कन्हैया, कुंवर कन्हैया रे कुंवर कन्हैया।
कौर नगर की गुजरिया।
गोकुल नगर के कुंवर कन्हैया कुंवर कन्हैया रे कुंवर कन्हैया।
मथुरा नगर की गुजरिया और रंग डारे केसरिया।।

ISSN: 2584-0819

ढिमराई लोक गीत- ढिमराई लोक गीत ढीमर जाति द्वारा गाया जाता है। जिसमें वह अपने व्यवसाय का वर्णन अत्यंत मनोहर रूप में करते है। वर्तमान में यह लोक गीत विलुप्त होता जा रहा है।
ढीमर करत लगै रोजगारे।
गावन-गावन में तला खुदे हैं।
ओय में लगे है सिगारे अपार ढीमर करन……।
ओय तला के तोड़े हें सिगारे।
अरे ओय की खेदी मुरार, ढीमर करन…..।
अरे ओय तले जावे निकालत कमल गटें……।।

रमटेरा लोक गीत- यह बुंदेली लोकगीत मकर संक्रांति के दिन गाया जाता है। इसमें रामायण की कथा को लोक गायन शैली में प्रस्तुत किया जाता एवं वर्तमान स्वरूप में इसमें शंकर भगवान राधा कृष्ण एवं अन्य देवी देवताओं का भी वर्णन किया जाता है।
“महादेव बाबा बड़े रसिया रे।
बड़े रसिया रे माई गौर से जोरें कैसे गाँव रे।
महादेव बाबा है।।”

आल्हा लोकगीत- आल्हा बुंदेलखंड का अति प्रसिद्ध लोकगीत है। जो न सिर्फ बुंदेलखंड में बल्कि उसके आसपास के क्षेत्रों में भी पाया जाता है। वीर रस से परिपूर्ण लोकगीत हैं, जिसमें आल्हा-ऊदल एवं बुंदेलखंड के अन्य वीर योद्धाओं के पराक्रम और बुंदेलखंड की महागाथा का वर्णन किया जाता है।
ददा लड़त जब सरग सिधारे, आल्हा होगे एक अनाथ।
दाई देवल परे अकेल्ला, राजा रानी देवँय साथ।
तीन महीना पाछू जनमे, बाप युद्ध में जान गवाय।
बीर बड़े छुट भाई आल्हा, ऊधम ऊदल नाँव धराय।
राजा परमल पोसय पालय, रानी मलिना राखय संग।
राजमहल मा खेलँय खावँय,आल्हा ऊदल रहँय मतंग।।

परसा लोकगीत- यह लोक गीत का ही प्रारूप है जिसमें लोक जीवन के दिनचार्य का गेय शैली में वर्णन किया जाता था। वर्तमान समय में यह लोक गीत प्राय: विलुप्त हो गया है।
हाथ जोर कर रिछवा बोले, माता सुनो हमारी बात
अग्यों दै दव देश बंगाले,मइया चलो हमारे साथ
बोली सारदा रिछवा से सुन (मइया) मोरे रिछारिया माल
अग्गम जइयो पिच्छम जइयो और जइयो (पूना) गुजरात
देश बंगाले बेटा ने जइयो, (इत्ती) मानो कही हमार।।

बधाई लोक गीत- बधाई गीत परम्परा बुन्देलखण्ड में प्राचीन समय से चली आ रही है। वर्तमान समय में यह लोक गीत गायन का प्रचलन प्राय: कम हो गया है।
घरें में भये नन्दलाल मनवे में माला हैं माला।
मइया यशोदा ने नन्दलाल पाले।
मइया पें ब्रजराज आये।

ISSN: 2584-0819

कौसल बें कने पाया निराला।
नन्दने पाला है महालाल।।

गारी लोक गीत- बुन्देलखण्ड का यह जनप्रिय लोकगीत है। विवाह उत्सवों में यह स्त्रियों द्वारा गाया जाता है। वर्तमान में यह शहरी क्षेत्रों से विलुप्त हो गया है एवं ग्रामीण क्षेत्रों में यह अब भी प्रचलित है।
रंग महल में उतरी राधिका कर सोलहु सिंगार मोरे लाल।
सासु यशोदा पूछन लागीं काहे बहु बदन मलीन मोरे लाल।
कहा बताउं सास यशोदा लाज शरम की बात मोरे लाल।
हमसे ण कहु तुम सरम करौ बहु बात जो होय बनाओं मोरे लाल।
सोवत ती मैं रंग महल में काहु ने बेसर चुराई मोरे लाल।
जिनने तुमरी बेसर चुराई वा मोरो लाल है लाल।।

लोक नृत्य- बुन्देलखण्ड के लोक नृत्यों की विशिष्ट शैली है। यहाँ पर अनेक प्रकार के नृत्य किये जाते है। राई नृत्य यहाँ का अत्यंत प्रसिद्ध नृत्य है जिसने अपनी पहचान देश-दुनिया में बनाई है। इसके अतिरिक्त यहाँ पर अनेक लोक नृत्य प्रसिद्ध है।
राई लोक नृत्य- राई लोकनृत्य बेड़ जनजाति द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इस नृत्य में नाचने वाली नृत्यांगनाओं को बेड़नियाँ कहा जाता है। यह नृत्य कत्थक की ही तरह है परन्तु इसमें नृत्य करने वाली बेड़नी ७२ गज का लहंगा पहनकर एवं घूँघट डालकर नृत्य करती है। इसमें बुन्देली लोक कवि ईसरी के फाग गाये जाते है। राई नृत्य की प्रसिद्ध कलाकार चंदा देवी है।

सेरा लोक नृत्य- यह नृत्य किसान रबी एवं खरीफ की बुआई के समय करते है। राई नृत्य से काफी मिलता-जुलता स्वरूप इस लोक नृत्य का है। अधिकांशत: यह नृत्य पुरुषों के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। वर्तमान में यह नृत्य कला विलुप्त हो चुकी है।
बधाई लोक नृत्य- बुन्देलखण्ड क्षेत्र में बधाई लोक गीत के अतिरिक्त बधाई लोक नृत्य भी किया जाता है। इस नृत्य में संगीत की धुनों पर पुरुष और महिलाएं सभी मिलकर नृत्य करते है। शहरों में तो यह नृत्य कला अब देखने को नहीं मिलती एवं मिलती भी है तो इसका स्वरूप बदल गया है ग्रामीण क्षेत्रों में यह लोक नृत्य अपने स्वरूप में विघमान है। इस लोक नृत्य में पशुओं का भी प्रयोग किया जाता है।

कानड़ा लोक- कानड़ा लोक नृत्य बुंदेलखंड के लोकप्रिय नृत्य कला है। इसे पावन अवसरों में विशेष रूप से विवाह के नृत्य समय प्रस्तुत किया जाता है। इसमें मुख्य नर्तक के अतिरिक्त और भी सदस्य होते हैं जो पारंपरिक वेशभूषा में नृत्य करते है। कानड़ा नृत्य में रमतुला, डपला, खजली,नरगा, जोरी इत्यादि वाद्य यंत्रों का प्रयोग किया जाता है। वर्तमान में है सुंदर लोक नृत्य कला विलुप्त होने की कगार पर है।

दिवाली लोक नृत्य- यह बुंदेलखंड का प्राचीन समय से चला आ रहा लोक नृत्य है। जो वर्तमान में भी उसी जोश के साथ प्रस्तुत किया जाता है। इस नृत्य का आधार प्राचीन दंत कथाएं है,ऐसा कहा जाता हैं कि जब कृष्ण यमुना नदी के किनारे क्रीड़ा कर रहे थे तो उस समय उनकी गाय चरते हुए दूर चली गई। अपनी गायों को वहां ना पाकर कृष्ण दुखी: हो गए और उन्होंने मौन धारण कर लिए उनके मित्रों ने जब यह देखा तो वह गायों को खोजने के लिए गांव -गांव गए तदोपरांत गायों मिल गई तब कृष्ण ने अपना मौन तोड़ा। इसी आधार पर बुंदेलखंड में दिवाली नृत्य के माध्यम से इस कथा को पुनः जीवित किया जाता है। इस नृत्य में युवा मौन धारण करके मयूरपंख लेकर बड़े ही मोहक अंदाज में नृत्य करते है।

ISSN: 2584-0819

ढिमाराई लोक नृत्य- यह लोक नृत्य ढीमर अर्थात केवट जाति द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इसलिए इसे ढिमरयाई नृत्य भी कहते है। इस नृत्य का प्रमुख नर्तक पैरों के पंजों पर खड़े होकर नृत्य करता है। वैसे तो यह नृत्य बारहमास किया जाता हैं किन्तु विशेष रूप से विवाह-उत्सवों में किया जाता है।

इसके अतिरिक्त बुन्देलखण्ड में और भी नृत्यव् किये जाते हैं जैसे- जवारा नृत्य, कलश नृत्य, दिलदिल घोड़ी नृत्य, जुगिया नृत्य इत्यादि।

बुन्देलखण्ड की चित्रकला- बुंदेलखंड चित्रकला के लिए भी अति प्रसिद्ध है। चंदेल शासकों द्वारा बनवाए गए खजुराहो के मंदिर बुंदेली कला के अभूतपूर्व उदाहरण है। चित्रकला किसी भी आंचल विशेष के लोक जीवन को प्रदर्शित करने का साधन होती है। बुंदेलखंड लोग चित्रकला की अपनी विशिष्ट पहचान है।

सुरैती चित्रकला- सुरती बुंदेलखंड के पारंपरिक भित्ति चित्र है जो दीपावली के अवसर पर बनाया जाता है। सुरैती महिलाओं द्वारा बनाई जाती है। सुरैती में दीवारों पर लक्ष्मी विष्णु की आकृतियों को उकेरा जाता हैं फिर इसे गेरू से रंग दिया जाता है। यह बुंदेलखंड लोकप्रिय प्रतीकात्मक चित्रकला है।

नौरत चित्रकला- नवरात्रि के समय कुँवारी कन्याओं द्वारा उदेखड़ का चित्र बनाया जाता है. जो मिट्टी, गेरू एवं हल्दी के माध्यम से रंगा जाता है।

मोरइला चित्रकला- मोरइला का अर्थ मोर के चित्र से होता है। बुन्देलखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी यह लोक चित्रकला देखने को मिलती है। इस चित्रकला में दीवारों को छाई मिट्टी से पोता जाता हैं फिर पतली मिट्टी में गेरू मिलाकर मोरों की जोड़ी की आकृति बनाई जाती हैं और सूखने के बाद उसमें गेरू एवं अन्य रंगों से रंग भरे जाते है।
कलम शैली- यह चित्रकला बुन्देलखण्ड की वीरता एवं संपन्नता का प्रतीक मानी जाती है। इस चित्रकला में पेड़ों की छालों में चित्र उकेर कर उनमें रंग भरे जाते हैं फिर इन्हें गोशाला में दबाया जाता हैं ताकि गोमूत्र से इनका रंग गहरा हो जाये। वर्तमान समय में तमाम प्रयासों के बाद भो इस चित्रकला का संरक्षण नहीं हो पा रहा है।

बुन्देली आभूषण- मानव- सभ्यता जब से विकसित हुई हैं आभूषणों का विकास भी तभी से माना जाता है। आभूषण स्त्रियों के श्रृंगार का अभिन्न अंग है। लोक संस्कृतिमें आभूषण का विशेष महत्व होता है। आभूषण सौन्दर्य के साथ-साथ स्वास्थ्य के लिए भी लाभदायक है. ज्योतिषविदों ने ग्रह-नक्षत्रों एवं आभूषणों का संबंध बताया है। बुन्देलखण्ड में आभूषणों का विशेष महत्व है। दंतकथा हैं कि पृथ्वीराज-महोबा युद्ध में पृथ्वीराज में अपनी मांगों में नौलखा हार माँगा था। बुन्देलखण्ड के आभूषणों का खास पहचान हैं यहाँ सोने-चांदी के अतिरिक्त गिलट के आभूषण भी पहने जाते है। गिलट सोना- चांदी से सस्ती धातु होती है जो आम जन की पहुंच में होती है। बुन्देलखण्ड में गिलट आभूषण अत्यंत लोक प्रिय है। वर्तमान में बुन्देली पारम्परिक आभूषण विलुप्त होते जा रहे है।

पैरों के आभूषण-
१.बिछिया- बिछिया जो सुहाग का प्रतीक मानी जाती है। विवाहित स्त्रियों द्वारा पैरों की अँगुलियों में पहनी जाती है।
२.अनोखा- चांदी या गिलट के बनें उमेंठे तारों के लच्छों के बीच-बीच में समान अंतर से लगे कुंडों में घुंघरू गँसे रहते है अनोखा लच्छों के साथ पहना जाता है।
३.कड़ा- चांदी का बना ठोस आधा इंच मोटा गोलाकार कड़ा होता है। जिसके दोनों सिरों में गुटियोंदार

ISSN: 2584-0819

डिजाइन बनी होती है. यह सादा और डिजाइनदार दोनों प्रकार के होते है।
इसके अतिरिक्त पैरों में अनौटा, छला, कटीला, गेदें, गुटियाँ, गूजरी, घुघरिया (नुपुर),चुल्ला, चूरा, छड़ा, जेहर/झांझे, टोडर, पैजना, तोड़ा, टोडर इत्यादि।

कमर के आभूषण- कमर के आभूषण जिसे करधौनी कहा जाता है। यह सोने,चांदी और गिलट की बनी होती है। कटि के चारों ओर पहनी जाती है, इसकी लरों के बीच-बीच में ठप्पे बने होते हैं और नीचे की तरफ झाँलर बनी होती है।
हाथ के आभूषण- हस्त आभूषण प्राचीन काल से चले आ रहे है। वैदिक काल में अंगूठी को हिरण्यपाणि कहा जाता है। बुन्देलखण्ड में हस्त आभूषणों के अनेकों स्वरूप है।

१.कौंचा- कौंचा हथेली के पीछे का भाग और कलाई दोनों के जुड़ने वाले स्थान को कौंचा कहते है। इस पर ही स्त्रियाँ कड़ा पहनती है। जो गोलाकार होता है तथा इसके दोनों इसके सिरों पर घुमाव रहता है।
२. गाजरा- गाजरा, गजरिया या कटीला सोने-चांदी एवं गिलट के बने महीन तारों की जालीनुमा बनावट वाले गोलाकार पोल होते है। जिनके बीच-बीच में बिना बजने वाले घुंघरू लगे होते है।
३. चंदौली- चंदौली चवन्नी जैसे सिक्कों को जोड़कर बनायी जाती है जो गाजरा के साथ मिलाकर पहनी जाती है।
इसके अतिरिक्त चूड़िया, चूरा, छल्ला, तैतियां, दौरी, नौराई, पछेला, बेलचूड़ी इत्यादि का प्रचलन है।
गले के आभूषण- प्राचीनकाल से ही स्त्रियों का सर्वाधिक लोकप्रिय आभूषण है।
१.कटमा- सोने-चांदी के ठोस या पत्तादर चपरा भरे लम्बे से फल और मढियानुमा ऊपर उठे फल जिनके दोनों तरफ कुंदा लगे रहते है। उन्हें कटमा कहते है।
२.खगौरिया- चांदी की बनी ठोस उतार-चढ़ाव वाली छोरो पर पतली होती है। इसके बीच के भाग पट्टी में बेलबूटे बने रहते है. पहले विवाह के समय यह जरुर आती थी किन्तु अब इसका चलन कम हो गया है।
३.जल जकंठुका- यह गले का आभूषण होता है जिसमें कमल की आकृति के सोने के गुरिये जरी में बरे रहते है। इसका वर्णन कवि बोधा ने अपने ग्रन्थ विरहवरीश में किया है।

इसके अतिरिक्त ठटकार, चप्पो, गुलूबंद, कंठमाला, ठुसी, ढुलनियां, पाटिया, लल्लरी, सुतिया, सेली, हंसली, नौलखा आदि।
कान के आभूषण- तरकी, तरौना, नगफनियाँ, फुल्ली, बंदनीबारी, बिचली,बुँदे, मुरकी, लोलक, पानपत्रा इत्यादि।
नाक के आभूषण- कील, झुलनी, टिप्पो, दुर, नथ, बेसर इत्यादि।

बुन्देलखण्ड का खान-पान- हर क्षेत्र का अपना विशेष खान-पान होता है। बुन्देलखण्ड का खान-पान अत्यंत साधारण है। यहाँ पर तलीय व्यंजन कम ही बनाये जाते है. फिर भी हर प्रांत का अपना विशिष्ट भोजन होता है। बुन्देलखण्ड में महुआ, बेर और गुलगुच (महुए का पका फल) यहाँ के विशिष्ट व्यंजन है। इसी कारण से महुआ को मेवा, बेर को कलेवा तथा गुलगुच को सर्वोत्तम मिष्टान का गौरव प्राप्त है। बुन्देलखण्ड में यह कहावत प्रसिद्ध है कि-
महुआ मुरका बेर कलेवा गुलगुच बड़ी मिठाई।
जेकों खाने जे सब तो गुड़ाने करौ सगाई।।
इसी प्रकार गड़िया गुल्ला बुन्देलखण्ड की सर्वाधिक प्रसिद्ध मिठाई है। मकर संक्रान्ति के समय यह बाजारों में आपको खूब दिखती है। यह मिठाई बुन्देलखण्ड में सर्वाधिक प्रसिद्ध है।

ISSN: 2584-0819

इसके अतिरिक्त यहाँ पर भात, दाल, कढ़ी, बरा-मगौरा, बिजौरो, खांड, घी, मांड़े, मिर्च का चूर्ण तथा महुआ से बना मुरका, लटा और डुबरी, सत्तू, बिरचुन, महेरी, लपसी, मीड़ा, घेंघुर इत्यादि तथा भोजन के बाद पान खाने का प्रचलन है।

बुन्देलखण्ड की पारम्परिक वेशभूषा- बुन्देलखंड में महिलाओं में घाघरा पहनती हैं एवं श्रमिक महिलाएं कांछ वाली धोती पहनती है जिसका प्रचलन वर्तमान में भी है। पुरुष साफा, बंडी, मिर्जई, कुर्ता तथा गले में सुतिया पहनते है।

तीज-त्यौहार– बुन्देलखण्ड के पर्वो का भी अपना ऐतिहासिक महत्व है। यहाँ पर गनगौर, चैती पूनै, असामाई, अकती, बरा-बरसात, कार्तिक पूजन, राखी, तीज इत्यादि उल्लासपूर्वक मनाये जाते है।

कजली मेला- ११८२ ई० में महोबा के राजा परमाल ने कजली मेले की शुरुआत की थी। राजा परमाल की पुत्री चंद्रावल जब अपनी सखियों के साथ कीरत सागर में भुजरिया विसर्जन करने जा रही थी तो रास्ते में पृथ्वी राज चौहान की सेना ने उस पर आक्रमण कर दिया। तब महोबा के वीर योद्धा आल्हा-ऊदल जो उस समय महोबा से निष्कासित कर दिए गये थे राजकुमारी चंद्रावल जिसको वे अपनी बहन मानते थे उसकी लाज बचाने के लिये पृथ्वी राज चौहान से युद्ध किया और विजय हुए तब चंद्रावल और उसकी सखियों में कीरत सागर के तट पर अपनी भुजरिया विसर्जित की और आल्हा को राखी बाँधी. इसी कारण से बुन्देलखण्ड में रक्षाबन्धन एक दिन बाद मनाने की परम्परा है। कीरत सागर युद्ध के बाद कजली मेले उत्सव को विजय उत्सव के रूप में मनाने लगे।

निष्कर्ष-

आधुनिकता के इस दौर में अधिकांश लोक कलाएँ सिर्फ इतिहास के पन्नों में ही रह गई है। बुन्देलखण्ड लोक कलाओं से संपन्न क्षेत्र है। बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति प्राय: विलुप्ति की कगार पर है। आज से तकरीबन १५ वर्षो पहले तक दिवारी जैसे लोक नृत्य पारंपरिक कलाकारों के द्वारा प्रस्तुत किए जाते थे परन्तु अब वह भी देखने को नहीं मिलते है। बुन्देलखण्ड वीरता एवं अपनी विशिष्ट लोक संस्कृति के लिए भी प्रसिद्ध है। आधुनिकता ने इन लोक कलाओं के महत्व को कम कर दिया है। परम्परागत वस्तुओं की जगह अब आधुनिक वस्तुओं ने ले ली है। आज हमारी युवा पीढ़ी अपनी लोक संस्कृति के ज्ञान से बिल्कुल अन्भिन्न है। परिवर्तन के इस युग में हम अपनी लोक संस्कृति को सहेजने में नाकाम हो रहें है। इस लेख के माध्यम से बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति से पाठकों को अवगत करने का छोटा सा प्रयास मात्र है।

सन्दर्भ सूची:-

1.हिंदी साहित्य कोश भाग-१, पृ.स.६८५
2.लोक साहित्य अर्थ और व्याप्ति, डॉ.सुरेश गौतम, पृ.सं.06
3.बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति और साहित्य, अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद', पृ.सं. 10
4.http://ignca.gov.in
5.https://www.vishwahindijan.in
6.https://www.bundeliijhalak.com
7.https://ccrtindia.gov.in